© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X

कालिदासकृत ऋतुसंहारम् एवं अभिज्ञानशाकुन्तलम् में पर्यावरण–संरक्षण

नवल किशोर शुक्ल
शोधच्छात्र
संस्कृत विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

'काव्य' शब्द संस्कृत भाषा में बहुत प्राचीन है जिसे 'कवि के कर्म' के रूप में स्वीकार किया गया है–कवेः कर्म काव्यम्। यह कवि शब्द 'कु' अथवा 'कव्' धातु से बना है जिसका अर्थ है–ध्वनि करना, विवरण देना, चित्रण कराना इत्यादि। तदनुसार, शब्दों के द्वारा किसी विषय का आकर्षक विवरण देना या चित्रण करना काव्य कहलाता है।

लौकिक संस्कृत साहित्य के लगभग सभी ग्रन्थों में पर्यावरण संरक्षण का श्लाघनीय उपदेश पक्ष मिलता है। निःसंदेह पर्यावरण संरक्षण का यह पक्ष विश्व के लिए मील का पत्थर साबित होगा, क्योंकि पर्यावरण–प्रदूषण के उपायों व इसके महत्त्वपूर्ण घटकों का संस्कृत के प्राचीन एवं अर्वाचीन काव्यों में दर्शाया गया है।

महाकवि कुलगुरु कालिदास के काव्यों में वृक्षों एवं पर्यावरण संरक्षण के अकाट्य असंख्य प्रमाण दिखाई पड़ते हैं। कालिदास के काव्यों में पद–पद पर हिमाचल से लेकर रत्नाकर और उसके मध्यवर्ती आर्यावर्त्त का ही नहीं अपितु समूचे भारतवर्ष और जम्बूद्वीप की संस्कृति धरोहर का स्तुतिगान मुखरित हुआ है। इसकी निरुपम सौन्दर्यमयी प्रकृति के अनुरूप अतुल रूप वैभव की रागिनी उनके छन्दों का सरगम बनी है। हमारे प्राचीन एवं अर्वाचीन वाङ्मय में पर्यावरण की सुरक्षा के लिए बहुत कुछ परोक्ष एवं अपरोक्ष रूप में कहा गया है।

वृक्षादि लगाने को धर्म, उनके पूजनादि को धर्म तथा वृक्षों को काटने को पाप माना है। इसी तरह यज्ञ करना, तालाब–कुएँ, बावड़ी बनाना व बाग लगाना आदि को पुण्य कार्य स्वीकार किया गया है। अतः पर्यावरण सुरक्षा के प्रसंग संस्कृत साहित्य में वृक्ष लगाने एवं सींचने आदि के वर्णन के रूप में लाये गये हैं। नदी, नद, सरोवर समुद्र–वर्णन, ऋतुवर्णन एवं सौन्दर्य वर्णन में प्राकृतिक उपमान खोजने के साथ–साथ नैसर्गिक चित्रण को महत्ता दी गई। प्राणिमात्र पर दया, पशु–पक्षियों से स्नेह, वृक्षलता और पुष्पादि से आत्मीय भाव से हम प्रकृति के साथ सामंजस्य बढ़ाते हैं। यही तो पर्यावरण संरक्षण है। पर्यावरण सुरक्षा की वचनबद्धता है। यज्ञधूम से वातावरण की परिशुद्धता एवं अन्तश्चेतना की विशुद्धि सहज स्वभाविक है।

सर्वप्रथम हम कालिदास कृत 'ऋतुसंहार' पर ही पर्यावरण संरक्षण का विष्लेषण व अनुशीलन करते हैं। संस्कृत साहित्य में स्वतन्त्र ऋतु वर्णन द्वारा पर्यावरण–सौष्ठव का वर्णन इस रचना में विशेष रूप से परिगणनीय है। इस रचना के माध्यम से कविकुलकमलदिवाकर कालिदास ने ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर व वसन्त नामक छः ऋतुओं का क्रमशः वर्णन किया है।

ऋतुसंहार के प्रथम सर्ग ग्रीष्म ऋतु वर्णन में सूर्य की प्रचण्ड किरणें सब को संतप्त करने लग जाती हैं। ग्रीष्म–ऋतु में सर्वत्र गर्मी का साम्राज्य दिखाई देता है। वनों में जल का मिलना असंभव सा हो गया है। प्यास से व्याकुल मृगों के तालु सूख गए हैं। ऐसे में मृगमरीचिका में जल प्राप्त करने की आशा से वे एक वन से दूसरे वन में दौड़ रहे हैं। कहने का आशय यह है कि 'जल ही जीवन है' भाव को आत्मसात् कर कवि पृथ्वी पर होने वाली झील के गिरते स्तर को पशु–पक्षियों के माध्यम से सिद्ध किया है एवं इसके माध्यम से जल की बूंद–बूंद बचाने का संदेश भी मिल जाता है–

मृगाः प्रचण्डातपतापिता भृशं तृषा महत्या परिशुष्कतालवः।
वनान्तरे तोयमिति प्रधाविता निरीक्ष्य भिन्नाञ्जनसन्निभं नभः।।

ग्रीष्मकाल रूपी राजा का चारों ओर इतना प्रभाव बढ़ गया है कि स्वाभाविक रूप से आपस में बैर रखने वाले जीव भी परस्पर के बैर का परित्याग कर मानो मैत्रीभाव का ही उपदेश देते हों।

जैसा कि सर्प और मयूर में वध्य–घातक भाव स्वाभाविक है, किन्तु सर्प भीषण गर्मी के प्रभाव से झुलस जाता है, मार्ग की गर्म धूल से जलता हुआ सा टेढ़ी गति से आकर अपना मुख नीचे करते हुए दीर्घ श्वांस लेकर लेटे हुए मयूर नीचे बैठ गया है। इसी प्रकार मयूर भी ग्रीष्म के प्रभाव से अत्यन्त क्लान्त है। वह अपने नीचे बैठे सर्प को देखकर भी कुछ नहीं कह पा रहा है–

रवेर्मयूखैरभितापितो भृशं विदह्यमानः पथि तप्तपांसुभिः।

अवाङ्मुखो जिह्नगतिः श्वसन्मुहुः फणी मयूरस्य तलेनिषांदति।।

उपर्युक्त पद्य के माध्यम से हमें भी पशु–पक्षियों की तरह जन्मजात वैरभाव का परित्याग कर आपस में सौहार्द भाव अपनाना चाहिए साथ ही पर्यावरण के संवर्धक इन पशु–पक्षियों के अधिकाधिक संरक्षण का प्रयास करना चाहिए।

संस्कृत वाङ्मय में ऋतुराज वसन्त का आगमन शिशिर ऋतु के पश्चात् होता है। इसे ऋतुराज, मधुमास व कुसुमाकर इत्यादि अनेक नामों से अभिहित किया जाता है। इस ऋतु का आविर्भाव ही प्राणिमात्र के लिए खुशी के द्वार खुलना है। पर्यावरण–संवर्धन में इस ऋतु का महनीय अवदान दिखाई पड़ता है। बसन्त का यह चारु दृश्य भला किसके मन को मोहित नहीं करेगा–

द्रुमाः सपुष्पाः सलिलं सपद्मं स्त्रियः सकामाः पवनः सुगन्धिः।

सुखाः प्रदोषाः दिवसाश्चरम्याः सर्वं प्रिये! चारुतरे वसन्ते।।

प्रिये! सुन्दरतम बसन्त में सब कुछ सुन्दरतम है। वृक्ष फूलों से भरे हैं, जलाशयों में कमल खिले हैं, पवन सुगन्धित है दिवस रम्य है एवं सन्ध्यायें सुखकर है तथा नारियाँ भी अनुराग कामना भरी हैं। पर्यावरण संरक्षण का यह अकाट्य पक्ष है। महाकवि कालिदास ने पूर्वमेघ में पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से प्रकृति को प्रमुखतः आलम्बन, उद्दीपन, उपकारिका तथा अलंकारिका रूप में प्रस्तुत किया है।

आलम्बन रूप में प्रकृति के नयनाभिराम दृश्य को देखकर कवि का भावुक हृदय उमड़ता है तथा उसकी भावनायें काव्य का रूप ले लेती हैं। यक्ष मेघ से कह रहा है कि मन्द एवं अनुकूल पवन बह रहा है। बलाकायें पंक्तिबद्ध होकर आकाश में विचरण कर रही हैं यथा–

मन्दं मन्दं नुदति पवनश्चानुकूलो यथा त्वां वामश्चायं नदति मधुरं चातकस्ते सगन्धः।

गर्भाधानक्षणपरिचयान्नूनमाबद्धमाला, सेविष्यन्ते नयनसुभंग खेभवन्तं बलाकाः।

इस श्लोक में प्रकृति के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण को दर्शाया गया है। 'कालिदासस्य सर्वस्वमभिज्ञानशाकुन्तलम्' इस सूक्त कथन के अनुसार अभिज्ञानशाकुन्तल नाटक में कालिदास की काव्य–नाट्य प्रतिभा का चरम उन्मेष सर्वमान्य एवं सहृदय संवेद्य है। न केवल संस्कृत–वाङ्मय में बल्कि समूचे विश्व साहित्य में कविताकामिनी के विलास कालिदास की यह नाट्यकृति पद–पद पर पर्यावरण संरक्षण व संवर्धन की अनुपम शिक्षा देती है। जैसे कि यह सूक्ति भी प्रचलित है–

''**काव्येषु नाटकं रम्यं तत्ररम्याशकुन्तला।।**''

कालिदास ने अभिज्ञानशाकुन्तलम् के मंगलाचरण में ही पर्यावरण संरक्षण को दर्शाते हैं–

''या सृष्टिः स्रष्टुराद्या वहति विधिहुतं या हविर्या च होत्री

ये द्वे कालं विधत्तः श्रुतिविषयगुणाः या स्थिता व्याप्य विश्वम्।

यामाहुः सर्वबीज प्रकृतिरिति यया प्राणिनः प्राणवन्तः

प्रत्यक्षाभिः प्रपन्नस्तनुभिरवतु वस्ताभिरष्टाभिरीशः।।

इस पद्य में अष्टरूपधारी शिव की स्तुति के माध्यम से प्रकृति के मूल तत्त्वों को दर्शाया गया है।

प्रथम अंक में वैखानस राजा दुष्यन्त से कहता है–'आश्रममृगोऽयं न हन्तव्यो न हन्तव्यः। अर्थात् यह आश्रम का मृग है, अतः निरपराध होने से मारने योग्य नहीं है। क्योंकि प्राचीनकाल में आश्रम–स्थलों का पर्यावरण परिरक्षण की दृष्टि से काफी महत्त्व हुआ करता था। तृतीय अंक में कण्व शिष्य यज्ञकर्म की चर्चा व कुशों को वेदी पर बिछाने का वर्णन कर दैनिक यज्ञ कर्म की ओर संकेत कर रहा है–

''**यावदिमान्वेदिसंस्तरणार्थं दर्भानृत्विम्भ्य उपनयामिः।**''

इसी प्रकार वेदों में जो यज्ञों को महत्त्व दिया गया है उसका मूल कारण भी यही है कि याज्ञिक क्रियाओं से प्राकृतिक वातावरण प्रदूषण रहित और स्वच्छ हो जाता है तथा उससे पर्यावरण सुरक्षित रहता है। यज्ञ के सन्दर्भ में गीता का यह कथन सर्वमान्य है–

अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः।

यज्ञाद् भवन्ति पर्जन्यो यज्ञः कर्म समुद्भवः।।

महर्षि कण्व का यह कथन भी इसकी पुष्टि करता है–

अपध्नन्तो दुरितं वैतानास्त्वां वह्नय पावयन्तु।

पर्यावरण संरक्षण का सर्वाधिक पक्ष अभिज्ञानशाकुन्तल के चतुर्थ अंक में पद–पद पर स्पष्टतः परिलक्षित होता है। इस नाटक में तपोवन की प्रत्येक लता शकुन्तला की बहिन प्रत्येक पादप उसका भाई और प्रत्येक पशु–पक्षी उसका पुत्र रूप में प्रस्तुत हुआ है।

महर्षि कण्व शिष्य ने चन्द्रमा व सूर्य के अस्त व उदय को लक्ष्य कर जीवनगत सत्य का रहस्योद्घाटन किया है। शकुन्तला की विदाई के समय वन वृक्षों द्वारा आभूषण प्रदान किये जाते हैं। अतः शकुन्तला अपने पतिगृह जाने लगती है तो वनस्पतियाँ शकुन्तला के लिए वस्त्राभरण, लाक्षारस और मांगल्य तथा क्षौमवस्त्रादि प्रदान करती हैं। वनदेवता आशीर्वचन देते हुए शकुन्तला को 'शिवास्ते पन्थानः सन्तु' कहकर गौरवमयी उपदेश दे रहे हैं–

''रम्यान्तरः कमलिनीहरितैः सरोभिश्छायाद्रुमैर्नियमितार्कमयूखतापः।

भूयात् कुशेशयरजोमृदुरेणुरस्याः शान्तानुकूलपवनश्चशिवश्च पन्थाः।।''

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि ''वृक्ष लगाओ जीवन बचाओ का भाव आत्मसात् कर पर्यावरण संरक्षपण में पक्षियों के पुनः कलरव को बरकरार रखने हेतु शिक्षाविदों, छात्रों, नवयुवकों एवं सम्बन्धित प्रशासन विभागों को अपना अभूतपूर्व योगदान देकर प्राकृतिक सम्पदा को उपकृत करना चाहिए। भाव यह कि वन व प्रकृति प्रदत्त समस्त वस्तुएँ शकुन्तला की तरह प्रत्येक प्राणिमात्र के जीवन रूपी पड़ाव में कदम–कदम पर मंगलकारी सिद्ध होते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अभिज्ञानशाकुन्तलम्–कालिदास डॉ0 शिवबालक द्विवेदी, हंसा प्रकाश, जयपुर।
2. संस्कृत साहित्य का इतिहास–डॉ0 उमाशंकरशर्मा 'ऋषि', चौखम्भा भारती अकादमी, वाराणसी।

3. मेघदूत (पूर्व मेघ) कालिदास– डॉ0 आर0वी0 शास्त्री, हंसा प्रकाशन, जयपुर।

4. ऋतुसंहारम्, 1.14

वही, 1.13

5. ताम्रप्रवाला स्तबकावनम्राश्चूतद्रुमाः पुष्पितारुभाखाः।

कुर्वन्ति कामं पवनावधूताः पर्युत्सुकं मानसमङ्गनानाम्।।

(ऋतुसंहारम्, 6.17)

6. श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय 3.14, गीता प्रेस, गोरखपुर।

7. संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास–डॉ0 राधावल्लभ त्रिपाठी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।

8. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास–डॉ0 कपिलदेव द्विवेदी, रामनारायण लाल, विजय कुमार, इलाहाबाद।